ISSN: 2249-894X IMPACT FACTOR : 3.8014 (UIF)

REVIEW OF RESEARCH

VOLUME - 6 | ISSUE - 9 | JUNE - 2017

गुरू जांभोजी की दृष्टि में बाल कल्याण और नैतिक विकास

डॉ. विदुषी आमेटा[1], इंदिरा विश्नोई[2]
[1]सहायक आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी–विभाग,
माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.)
[2]शोध छात्रा, हिन्दी–विभाग, माधव विश्वविद्यालय,
पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.)

भारत महापुरूषों की भूमि है। जब–जब धरती पर पाप बढने लगता है और अन्याय और अत्याचार अपने चरम पर पहुँच जाता है, तब–तब भगवान इस धरा पर अवतरित होते हैं। भगवान श्री रामचन्द्र जी और भगवान श्री कृष्ण जी ने इसी हेतु अवतार लिया था। हमारे धर्मग्रंथों के अनुसार धरती को पापमुक्त कराने के लिए भगवान ने दस बार अवतार लिया है। गुरू जांभोजी के अनुयायी उन्हें ईश्वर का दसवां अवतार मानते हैं।

जांभोजी का जन्म विक्रम संवत 1508 में हुआ था। उस समय भारत की स्थिति अच्छी नहीं थी। सामाजिक कुरुतियाँ अपने उच्चतम स्तर पर थी। धर्म को लोग भूल चुके थे तथा आडम्बरों को ही धर्म मानने लगे थे। अपने को संत या महात्मा कहने वाले लोग शरीर पर भस्म लगाकर लाल पीले चंदन से श्रृंगार करके भोली–भाली जनता को पथ से भटका रहे थे। कुछ ढोंगी संतो ने तंत्र–मंत्र का सहारा लेकर चमत्कार दिखाना एक प्रकार का व्यवसाय बना लिया था। जनसामान्य इनके चमत्कारों से प्रभावित होकर भ्रमित हो रहा था। लोग इन्हे ही सच्चे साधुओं की संज्ञा देने लगे थे और उन्हें पूजने लगे थे। इस काल में इन्हीं ढोंगी साधुओं ने बलि प्रथा को प्रोत्साहन दिया था और विभिन्न देवी–देवताओं को खुश करने के लिए पशु बलि को महत्वपूर्ण अनुष्ठान के रूप में स्थापित किया था। यह पशु बलि व्यक्ति अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति के लिए देते थे। इस प्रकार संपूर्ण समाज धर्म के आध्यात्मिक स्वरूप को भूलकर भौतिक सुखों की प्राप्ति को ही सब कुछ मानने लगा था और इसके लिए सब कुछ करने को तैयार था।

ऐसी ही समय में जांभोजी इस धरा पर एक देवपुरूष के रूप में अवतरित हुए। जांभोजी ने समाज की तत्कालीन स्थिति को समझा और जनसामान्य के कल्याण का संकल्प लिया । उन्होंने सनातन धर्म के साथ ही अन्य धर्मों का सूक्ष्म और गहन अध्ययन किया तथा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि केवल दया ,करूणा ,सत्य और अहिंसा जैसे मानवीय गुणों के विकास के द्वारा ही समाज का कल्याण संभव है।

जांभोजी ने जनकल्याण के लिए उनतीस नियम बनाएं। इनसे से बीस नियम सनातन धर्म से लिए गए थे तथा नौ नियम अन्य धर्मों के थे। इन्ही नियमों के आधार पर महागुरू ने विक्रम संवत 1542 में विश्नोई पंथ की स्थापना की । इसलिए कहा जाता है कि इन्हीं उनतीस नियमों को मानने वाले 'बीस+नौ' बिसनौई या विश्नोई कहलाते हैं।

जांभोजी ने जनसामान्य की समस्याओं को समझा और इन्हें दूर करने के लिए कर्मप्रधान मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया। श्रीमती सरस्वती विश्नोई के अनुसार श्री जांभोजी ने एक सच्चे संत के रूप में अपनी शब्दवाणी द्वारा आमजन को उपदेश दिये। उनका मुख्य उपदेश– 'जीयो और जीने दो' था । उनकी मान्यता थी

कि किसी भी प्राणी को बिना अपराध मनसा, वाचा एवं कर्मणा से दुःख देना पाप है। उन्होंने कहा व्यक्ति जन्म से सब समान होते हैं। कर्मों के अनुसार ऊँच व नीच कुल के समझे जाते है। उनके उपदेश कर्मप्रधान है।[1]

विश्व के अनेक ऐसे महापुरूष अवतरित हुए हैं, जिन्होनें अपनी अनमोल वाणी से जन–जन का कल्याण किया, इनमें जांभोजी का स्थान सर्वोपरि है। यही कारण है कि जनसामान्य ने जांभोजी को विष्णु का अवतार माना है। जांभोजी ने भी भगवान विष्णु को परमपिता माना है और उन्हें सर्वशक्तिमान देव के रूप में स्वीकार किया है। जांभोजी ने परमपिता विष्णु नाम को अधिक महत्व दिया है। उन्होनें विष्णु की परमसत्ता को स्वीकारते हुए मानव समाज को उद्‌बोधन दिया है कि हे मानव ! तू अल्पज्ञ है तथा तेरी शक्ति सीमित है।[2]

जांभोजी का चिंतन और उनकी विचारधारा नैतिक मूल्यों पर आधारित है एवं इसका मुख्य उद्‌देश्य लोक कल्याण है। उनका चिंतन बच्चों के लिए भी उपयोगी और मार्गदर्शक है। बच्चों को यदि शुरूआत से ही उच्च नैतिक मूल्यों से परिचित कराया जाए तो वे निश्चित रूप से अपना जीवन सफल बनाने के साथ ही सामाजिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

संगति का बच्चों के जीवन पर गहरा प्रभाव पडता है। बच्चों के मित्र जिस प्रकार के होते हैं, बच्चे उसी प्रकार के बन जाते हैं। यदि बच्चों के मित्र सह्‌दय, विनम्र और आस्थावान एवं बडों का सम्मान करने वाले, शांत स्वभाव के और ज्ञानार्जन में रूचि रखने वाले होते हैं, तो उनमें भी इसी प्रकार के सद्‌गुण उत्पन्न होंगें। जांभोजी ने इसें एक मौलिक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया है–

लोहे हुंता कंचण घडियों , घडियों ठांव सुठाउँ।[3]

जांभोजी ने शिक्षा के महत्त्व, इसकी उपयोगिता और इसके स्वरूप पर विस्तार से प्रकाश डाला है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बच्चों को परीक्षा में पास कराना ही उद्‌देश्य मान लिया गया है अथवा तकनीकी शिक्षा देकर शिक्षा को रोजगारन्मुख बना दिया गया है। इस शिक्षा प्रणाली में नैतिक विकास पर कोई बल नहीं दिया गया है। यही कारण है कि छात्र अपने गुरूओं का अपमान करते हैं। युवा अपने वृद्ध माता–पिता को प्रताडित करते हैं अथवा वृद्धाश्रम पहुँचा देते हैं। नगरों और महानगरों में व्यक्ति अपने पडौसी से भी परिचित नहीं होना चाहता। बात–बात पर झगडे होने लगे हैं। अदालतों में मुकदमों की संख्या लाखों में पहुँच गयी है। इसी तरह पाश्चात्य संस्कृति, भौतिकवादी विचारधारा और धन के महत्त्व में इतनी वृद्वि हो गयी है कि भ्रष्टाचार और अपराधों की बाढ सी आ गयी है।

जांभोजी की शिक्षा इन सभी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करती है। जांभोजी ज्ञान को महत्त्वपूर्ण और सर्वोपरि दर्शाते हुए कहते है कि व्यक्ति के अंदर विचार करने की शक्ति उत्पन्न करने से ही जंभवाणी भरी पडी हैं। ज्ञान की उपलब्धि, आत्मानुशीलन और आत्मपरीक्षण से ही संभव है।[4] इस प्रकार यदि हमारे शिक्षक अपने बच्चों में दुनिया भर की जानकारी भरने के स्थान पर उनमें ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न करने का प्रयास करे तो हमारी शिक्षा प्रणाली अधिक उपयोगी हो सकती है।

वर्तमान में पाश्चात्य संस्कृति और धन लोलुपता से प्रभावित मानव, मानवीय मूल्यों से दूर होता जा रहा हैं, यही कारण है कि वह भीड में रहकर भी अकेला हो गया है। उसके दुःख–दर्द का कोई साथी नहीं रह गया है। व्यक्ति आत्मा का विकास करने के स्थान पर आत्मकेन्द्रित होता जा रहा है। इसका सीधा प्रभाव बच्चों पर पड रहा है। बच्चे भगवान का प्रतिरूप होते हैं। उनमें भरपूर मानवीय गुण होते हैं, किंतु धीरे–धीरे पारिवारिक परिवेश और सामाजिक परिवेश का उन पर प्रभाव पडता है और उनके मानवीय मूल्य नष्ट होने लगते हैं।

मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए जांभोजी ने दया, दान, परोपकार और क्षमा आदि के महत्त्व पर विस्तार से अपने विचार प्रकट किये हैं। जांभोजी का मानना है कि यदि कोई भूल से गलत काम कर बैठै तो उसे सजा देने की भावना न रखकर क्षमा कर देना चाहिए।

क्षमा, दया हिरदै – धरो – गुरू बतायो जांण।[5]

मानवीय मूल्यों में परोपकार का विशेष महत्व है। विश्व के सभी धर्म जीयो और जीने दो के सिंद्धात को आगे नही बढा पाये जबकि सनातन धर्म दूसरों के लिए जीयो के उच्च आदर्श पर आधारित है। जांभोजी के

साहित्य में इसी प्रकार के उच्च आदर्श को भूखे व्यक्ति को भोजन कराने का उदाहरण देकर प्रस्तुत किया गया है–

भूखे नै भोजन दिया, जाणि भगवंत जिमायौ।[6]

सामान्य व्यक्ति गुरू के दायित्व का निर्वाह नही कर सकता ।

गुरू तो इतन महान व्यक्ति होता है कि महात्मा कबीर ने उसे भगवान से भी बडा कह दिया है–

गुरू गोविंद दोनो खडे, काके लांगू पाय,
बलिहारी गुरु आपने जिन गोविंद दियो बताय।

जांभाणी साहित्य मे गुरू की महिमा का बखान किया गया है, किंतु गुरू वही व्यक्ति हो सकता है, जो सरल हो , सहज हो, शीलवान हो और विनम्र हो, जिसका ज्ञान लोककल्याणकारी हो।

जो गुरू होयबा सहजे, शीले शब्दे नादे,
वेदे तिहिं गुरू का आलिंकार पिछाणी।[7]

उपरोक्त गुणों से युक्त गुरूओं की आज परम आवश्यकता है। अपने विषय का ज्ञान रखने वाले गुरू ही छात्रों को विकास के मार्ग पर ले जा सकते हैं।

आजकल बहुत से बच्चे ऐसे देखे जाते हैं, जो कर्म के स्थान पर भाग्य पर अधिक विश्वास करते हैं। इस प्रकार के बच्चे परीक्षा में अध्ययन के बजाय उपवास करते हैं, भगवान को प्रसाद चढाते हैं तथा इसी प्रकार के आडम्बर वाले काम करते हैं। इस प्रकार के लोग स्वंय तो कर्महीन होते हैं और दूसरों को कर्म का उपदेश देते हैं – पर उपदेश कुशल बहुतेरे। कर्म के महत्व को स्पष्ट करते हुए महात्मा तुलसीदास लिखते है–

कर्म प्रधान विश्व रूचि राखा। जो जस चहे सो तस फल चाखा।।

जांभोजी ने भी कर्म के महत्व को स्वीकारते हुए कहा है कि पहले हमें कर्म करना चाहिए । इसके बाद दूसरों को कार्य करने के लिए कहना चाहिए।

पहलू किरिया आप कुमाइयै, तो अवरां ने फुरमाइयै।[8]

नशे का सेवन दिन – प्रतिदिन बढता जा रहा है। छोटे सामान्य विद्यालयों से लेकर बडे –बडे कॉन्वेंट विद्यालयों व महाविद्यालयों तक बच्चे इसके शिकार हैं। इसके लिए बच्चे चोरी करते हैं, झूठ बोलते हैं और कभी – कभी तो आपराधिक कार्यों में शामिल हो जाते हैं। इसकी आदत पड जाने के बाद कभी नही जाती। जांभोजी के अनुसार नशा करने वाला अंत में नरक में ही जाता है।

भांग तमाखू पोसत पीवहिं ,खाय अफीम संभु क्यों जीव ही ।
मदिरा ,मांस तास कुल खावहि, अवस अगति जाय नरक पावही।[9]

जांतिप्रथा , ऊँच – नीच, छुआछूत तथा धर्म के आधार पर फैली हुई साम्प्रदायिकता भारत के मस्तक का कलंक है। इसे बडो के साथ ही बच्चों में भी देखा जा सकता है। कुछ संस्थाओं मे तो धर्म और मजहब के नाम पर घृणा की शिक्षा दी जाती है। वास्तविकता यह है कि भगवान ने जन्म से सभी को समान बनाया है। जातिवाद एवं साम्प्रदायिकतावाद मानव की देन है। जांभोजी ने भी इस प्रसंग को अपने साहित्य में उठाया है –

तइया सांसू, तइया मांसू, तइया देह दमोई।
उत्तम मद्यम क्यों जाणीजै, विवरस देखों लोई।।[10]

विश्नोई समाज की पर्यावरण चेतना से हम सभी परिचित है इस पंथ के प्रभाव से आज शिकारी लोग राजस्थान में वन्य जीवों का शिकार करने से डरने लगे। यह सब जांभोजी के उपदेशों का ही प्रभाव है। उनका मत है कि वन्य प्राणी व वनस्पति का पारस्परिक संबंध अटूट है। क्योंकि कोई भी जीव परोक्ष या अपरोक्ष रूप से वनस्पति पर ही जीवित है।[11]

निष्कर्ष :

यह कहा जा सकता है कि जांभोजी लोकमंगल हेतु इस धरा पर अवतरित हुए। उन्होंनें मानव जीवन के लगभग सभी पक्षों का गहराई से अध्ययन किया तथा गीता के कर्म सिद्वांत को सबसे बडा मानते हुए सदाचार, परोपकार ,अहिंसा, समानता सत्य और जीव रक्षा आदि को अपनाने पर बल दिया । उनकी वाणी और विचारधारा शाश्वत है। वर्तमान समय में इस विचारधारा के द्वारा जनसामान्य के साथ ही बच्चों का भी कल्याण किया जा सकता है और उनमे मानवीय गुणों का विकास किया जा सकता हैं।

संदर्भ :

1. गुरू जांभोजी का वैश्विक चिंतन – डॉ. सुरेन्द्र कुमार विश्नोई और राजकुमार सेवक– पृ. 75
2. उपरोक्त पृ. 1
3. जांभाणी साहित्य – विविध आयाम – डॉ. किशनाराम विष्नोई – पृ. 65
4. गुरू जांभोजी का वैश्विक चिंतन – डॉ. सुरेन्द्र कुमार विश्नोई और राजकुमार सेवक पृ. 70
5. उपरोक्त पृ 169
6. उपरोक्त पृ 150
7. उपरोक्त पृ 18
8. उपरोक्त पृ 66
9. उपरोक्त पृ 84
10. जाम्भाणी साहित्य विविध आयाम– डॉ कृष्णलाल विश्नोई, डॉ. बनवारीलाल साहू, डॉ. सुरेन्द्र कुमार विश्नोई पृ. 77
11. गुरू जांभोजी का वैश्विक चिंतन – डॉ सुरेन्द्र कुमार विश्नोई और राजकुमार सेवक पृ. 100